रघुवंशम् के श्लोकों का अनुवाद (1 से 11 तक)

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

अथ प्रजानामधिपः प्रभाते

जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम्।

वनाय पीतप्रतिबद्धवत्सां

यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच।।

रात बीतने पर प्रजारक्षक यशोधन (राजा दिलीप) ने मुनि की गाय को, जब उसका बछड़ा दूध पीने के बाद बाँध दिया गया और सुदक्षिणा गन्ध और माला से उसकी पूजाकर चुकी, वन में चरने के लिए छोड़ दिया।

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसु-

मपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।

मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी

श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।।

पतिव्रताओं में श्रेष्ठ राजा की धर्मपत्नी ने गाय के मार्ग को जिसकी धूल (नन्दिनी के) खुर के स्पर्श से पवित्र हो गई थी उसी प्रकार अनुसरण किया जैसे श्रुति के अर्थ के अनुसार स्मृति चलती है।

निवर्त्य राजा दयितां दयालु-

स्तां सौरभेयीं सुरभिर्यशोभिः।

पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां

जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्।।

दयावान्, कीर्ति से शोभायमान उस राजा ने रानी को लौटाकर चार सागररूपी चार थनों वाली सुरभी की कन्या की रक्षा की मानों गऊरूप में पृथ्वी की रक्षा कर रहा हो।

व्रताय तेनानुचरेण धेनो-

र्न्यषेधि शेषोऽप्यनुयायिवर्गः।

न चान्यतस्तस्य शरीररक्षा

स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः।।

व्रत के लिये (न कि जीविकोपार्जन के लिये) जो राजा गाय का अनुचर बना था उसने शेष सभी अनुचरों को (साथ चलने से) मना कर दिया क्योंकि अपनी शरीर रक्षा के लिए उसे दूसरे व्यक्ति की आवश्यकता न थी। कारण कि मनु की संतान अपने ही बल से रक्षित होती है (अपने ही पराक्रम से अपनी रक्षा करती है)।

आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां

कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च।

अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः

सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्।।

वह राजा गाय को घास का स्वादिष्ट कौर खिलाकर, उसको खुजलाकर और मक्खियों को उड़ाकर तथा उसे (गाय को) बिना रोक-टोक स्वच्छन्द विचरण करने देकर उसकी सेवा में लग गया।

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां

निषेदुषीमासनबन्धधीरः।

जलाभिलाषी जलमाददानां

छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्।।

जब गाय खड़ी होती थी तब राजा भी खड़ा हो जाता था, जब गाय चलती थी तब राजा भी चलने लगता था और जब वह बैठती थी तो राजा भी आसन लगाकर बैठ जाता था। जब वह जल पीती थी तो राजा भी जल पीने का इच्छुक हो जाता था। इस प्रकार राजा परछाई की तरह उस गाय के पीछे-पीछे बना रहता था।

स न्यस्तचिह्नामपि राजलक्ष्मीं

तेजोविशेषानुमितां दधानः।

आसीदनाविष्कृतदानराजि-

रन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः।।

(जङ्गल में गाय की सेवा के लिए) जाते समय राजा ने राजलक्ष्मी के सारे चिह्नों (छत्र, चामर आदि) को त्याग दिया था फिर भी अपने विशेष तेज के कारण वह छिप न सका (सब को यह मालूम हो ही जाता था कि यही राजा दिलीप है)। इस प्रकार राजा उस समय उस मद वाले हाथी की तरह प्रतीत होता था जिसकी मदरेखा बाहर न निकली हो बल्कि अन्दर ही छिपी हो।

लताप्रतानोद्ग्रथितैः स केशै-

रधिज्यधन्वा विचचार दावम्।

रक्षापदेशान्मुनिहोमधेनो-

र्वन्यान् विनेष्यन्निव दुष्टसत्त्वान्।।

लताओं की टेढ़ी-मेढ़ी तन्तुओं से बँधे हुए बालों से सुशोभित राजा दिलीप प्रत्यञ्चा चढ़े हुए धनुष को धारण किये हुए, मुनि वशिष्ठ की होमधेनु की रक्षा करने के बहाने मानो जंगली दुष्ट जीवों को शिक्षा देने के लिए जंगल में घूम रहे थे।

विसृष्टपार्श्वानुचरस्य तस्य

पार्श्वद्रुमाः पाशभृता समस्य।

उदीरयामासुरिवोन्मदाना-

मालोकशब्दं वयसां विरावैः।।

भृत्यों को विदा कर दिये हुए तथा वरुण के समान प्रभावशाली उस राजा के आस-पास के वृक्षों ने उन्मत्त पक्षियों के शब्द के द्वारा जय शब्द उच्चारण किया ऐसा मालूम पड़ता था।

मरुत्प्रयुक्ताश्च मरुत्सखाभं

तमर्च्यमारादभिवर्तमानम्।

अवाकिरन् बाललताः प्रसूनै-

राचारलाजैरिव पौरकन्याः।।

वायु से हिलती हुई छोटी-छोटी लताओं ने अग्नि तुल्य तेजस्वी, समीप में स्थित तथा पूज्य उस (राजा दिलीप) के ऊपर इस प्रकार फूलों की वर्षा की जैसे कि नगरवासियों की कन्यायें मङ्गलार्थक धान के लावों की वर्षा करती थीं।

धनुर्भृतोऽप्यस्य दयार्द्रभाव-

माख्यातमन्तःकरणैर्विशङ्कैः।

विलोकयन्त्यो वपुरापुरक्ष्णाम्

प्रकामविस्तारफलं हरिण्यः।।

यद्यपि राजा दिलीप ने धनुष धारण किया था फिर भी उनके हृदय का दयायुक्त भाव हरिणयों को मालूम हो गया था। वे निर्भय होकर उनके शरीर को देख रहे थे। इस प्रकार उनके शरीर को देखकर उन्हें (हरिणियों को) अपने नेत्र के बड़ा होने का फल मिल गया।